E-ISSN: 3048-6041 | Volume- 3, Issue- 3 | March 2026

दिव्यांग जीवन के विभिन्न पक्ष : 'मैं तुम्हारी तरह' कहानी संग्रह के परिप्रेक्ष्य में

सुमय्या. एस
शोधार्थी, श्री संकराचार्य संस्कृत विश्वविद्यालय, कालडी, एर्नाकुलम

सारांश

मानव जीवन की शुरुआत से ही मनुष्य-मनुष्य के बीच भेदभाव दृष्टिगत रहा है और उसके लिए समय-समय पर नए कारणों को भी मनुष्य ने ढूँढ निकाला है। मनुष्य होने के नाते समान स्तर का व्यवहार करना या सबको एक जैसे देखने की प्रवृत्ति कभी भी समाज में मौजूद नहीं रही है। जाति, धर्म, रंग, लिंग, देश, भाषा, क्षमता, आर्थिक दशा आदि असंख्य कारणों से मनुष्य ने ही मनुष्य को बाँटकर रखा है। इन सभी कारणों से मनुष्य के साथ जब भेदभाव होता है तब वे लोग स्वयं ही अपने अधिकारों के लिए आवाज़ उठाते हैं। इन सामाजिक सन्दर्भों को जब हम साहित्य के साथ जोड़कर देखते हैं इन्हीं शोषित लोगों की आवाज़ को साहित्य भी अपने में लेते हुए और व्यापक बनाता नज़र आता है। साहित्य में विभिन्न विमर्शों के जन्म को भी इसी के साथ जोड़कर देखा जा सकता है। यदि दिव्यांग लोगों की बात करें तो वे भी समाज का वह हिस्सा हैं जिन्हें समाज ने क्षमता के आधार पर अलग और अपने अधिकारों से सदा वंचित रखा है। उनके अधिकारों के संरक्षण की बात भी तब ही सामने आई थी जब वे खुद अपने लिए आवाज़ उठाई थी। हिंदी साहित्य भी इस आवाज़ को अपने में समाहित किया है और उनके जीवन की वास्तविकता की दस्तावेज़ीकरण करने की प्रयास कर रहा है। असल में दिव्यांग व्यक्तियों की दैनिक जीवन ही विभिन्न समस्याओं से गुज़रता है जैसा कि पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक, मनोवैज्ञानिक आदि। इन समस्याओं के सन्दर्भ में उनके जीवन का विश्लेषण करने से उनके जीवन की वास्तविकता समाज के सामने आ जाएगा।

बीज शब्द : दिव्यांग शब्द, जीवन, दिव्यांग विमर्श, परिवार, समाज, आर्थिक दशा, शिक्षा, सुविधाएँ, समावेश की आवश्यकता आदि।

मनुष्यों के बीच भेदभाव सदियों पुराना है चाहे कारण अलग-अलग रहे हैं। मनुष्यों के बीच समानता की बात तो होती रहती हैं लेकिन वास्तविकता कुछ और है। धर्म और जाति से लेकर मनुष्यों की क्षमता तक उसकी सूची लम्बी है। अपने आपको सबसे श्रेष्ठ समझने वाले लोग अन्य लोगों को विभिन्न कारणों से अपने से अलग रखते हैं। यही नहीं उन्हें अपने अधिकारों से भी वंचित रखा गया है और आज भी यह जारी है। इतिहास देखें तो वाकिफ हो जाते हैं कि जब भी इस तरह का भेदभाव एक हद से बाहर हो जाता है तो वे लोग खुद अपने लिए आवाज़ उठाते हैं और व्यापक स्तर पर चर्चा का केंद्र बन जाते हैं। अतः यही कहा जा सकता है कि उनकी लड़ाई का ही परिणाम है उनके जीवन में बदलाव। जब हम दिव्यांग व्यक्ति और उनके जीवन को इस तरह देखें तो वे भी सदियों से समाज में शोषण और भेदभाव का शिकार हैं। सदियों से उनके साथ यह भेदभाव मौजूद है और इतिहास में ऐसी घटनाएँ देखने को मिलते हैं जिनमें तत्कालीन समाज में दिव्यांगों के प्रति व्यवहार दर्शाया गया है। दिव्यांगता को लोग कर्मफल के साथ जोड़कर देखते थे और लोगों को मरने के लिए भी छोड़ दिया जाता था। 'प्राचीन और मध्यकालीन समय में दिव्यांग व्यक्तियों को अक्सर समाज से अलगाव और भेदभाव का सामना करना पड़ता था। फिर भी, कुछ ऐसे उदाहरण भी

Published: 27 March 2026
DOI: https://doi.org/10.70558/SPIJSH.2026.v3.i3.45627
Copyright © 2026 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0).

मिलते हैं जहाँ उन्हें सामाजिक रूप से स्वीकार किया गया, जैसे कि राजदरबारों या धार्मिक संस्थाओं में उन्हें विशेष भूमिकाएँ दी जाती थीं।*[1] दिव्यांग लोगों के प्रति इस प्रकार का मिश्रित व्यवहार इतिहास में मौजूद रहा है। अधिकांश स्थानों पर तिरस्कार का भाव ही देखने को मिलता था। उन्हें तो समाज अपना हिस्सा ही नहीं मानता था अधिकारों की तो दूर की बात है। उनके लिए प्रयुक्त शब्द से लेकर पारिवारिक, सामाजिक, शैक्षिक स्तर तक उनके साथ अन्याय ही होता है।

हर भाषा में दिव्यांगों के लिए प्रयुक्त शब्दों में समय-समय पर बदलाव आता रहा है लेकिन इन शब्दों के बदलाव से कुछ हो रहा है यह सोचने की बात है। अंग्रेजी में पहले 'हैंडीकैप्ड', 'इम्पैर्मेंट' आदि शब्दों का उपयोग होता था फिर 'डिसेबिलिटी' शब्द सामने आया। जब इस शब्द की ओर देखें तो पता चलेगा यह सर्वमान्य क्षमता या 'एबिलिटी' के हिसाब से नकारात्मक शब्द जोड़कर बनाया गया है। ज़ाहिर सी बात है कि लोगों की 'एबिलिटी' तो अलग-अलग होती है उसे किसी परिभाषा द्वारा सीमित नहीं किया जा सकता। अब तो 'पर्सन विथ डिसेबिलिटी' का उपयोग किया जा रहा है और इसमें यह बताया जा रहा है इसमें व्यक्ति को प्रधानता दी जा रही है और उसकी क्षमता बाद में आती है। अब यदि हिंदी में देखें तो बोलचाल की भाषा में अनेक शब्दों का उपयोग करने पर भी 'विकलांग' शब्द का प्रयोग सार्वजनिक स्तर पर उनके लिए किया जाता था और दिसम्बर 2015 में प्रधानमंत्री श्री. नरेन्द्र मोदी द्वारा इसे 'दिव्यांग' शब्द में बदल दिया गया। यह शब्द दिव्यांग व्यक्तियों को सम्मान देने के उद्देश्य से ही बनाया गया है और इसे दिव्य शक्ति के साथ जोड़ दिया गया है। यही कह सकते हैं कि दिव्यता के साथ जोड़कर देखने से उनकी समस्याएं कम नहीं होंगी उनके जीवन स्तर को ऊंचा बनाने के लिए भी कार्य करना पड़ेगा। यही बात शब्द की इस शब्द के प्रति अनेक दिव्यांग व्यक्तियाँ ही आपत्ति जताई है और यही कह सकती है कि वे जिस प्रकार है उसी प्रकार उन्हें स्वीकार करना ही बेहतर है। यह भी समझना ज़रूरी है कि दुनिया सभी मनुष्यों के लिए समान अधिकार के साथ बनाई गई है।

अपने को 'सामान्य' या 'पूर्ण' समझने वाले समाज अपने हिसाब से बनाया गया यह समाज दिव्यांग व्यक्तियों को समान रूप से व्यवहार करने में पीछे धकेल देते हैं। उनको हमेशा यही याद दिलाती है कि वे इस दुनिया के लिए नहीं बने हैं या उनका एक अलग दुनिया है। सार्वजनिक स्थान सभी लोगों के लिए समान रूप से उपयुक्त कराने के सारे प्रावधान के बाद भी आज भी हमारा देश उसमें सक्षम नहीं हो पाया है। लम्बे समय के बाद ही वे अपने लिए आवाज़ उठाए गए थे। उनके दैनिक जीवन की शुरुआत ही बहुत समस्याओं के साथ होती है। हर स्तर पर, जैसे पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक आदि के साथ-साथ मानसिक रूप से भी उन्हें बहुत समस्याएं होती हैं। उनके जीवन की वास्तविकता की ओर डॉ. अनिता गोदारा इशारा करती है कि- "सरकार द्वारा विकलांगों को आर्थिक सुदृढ़ता व सम्मान प्रदान करने लिये नौकरियों में आरक्षण, रोजगार की सुविधाएं, विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रम, सशक्तता हेतु व्यापक स्तर पर प्रयास, आर्थिक सुधार के लिये रोजगार परक पाठ्यक्रम तथा विकलांग आरक्षण द्वारा उन्हें स्वावलम्बी बनाने के प्रयास, विभिन्न योजनाएं विकलांगों के लिये राष्ट्रीय नीति लागू की जा रही है, परन्तु फिर भी जमीनी तौर पर विकलांगों को रोटी, कपड़ा और मकान जैसी मूलभूत आवश्यकताओं के लिये आजीवन संघर्ष करते जाना है।"[2] यही उनके जीवन की वास्तविकता है कि मनुष्य की सामान्य ज़रूरतों के लिए भी उन्हें संघर्ष करना पड़ता है। पारिवारिक सन्दर्भ में प्रमुख रूप से उनको अपनाने में दिक्कत होती है और अपने परिवार में ही वे अकेले हो जाते

[1] History of Disability in the Indian Context – Rehabilitation psychology resource hub

*In ancient and medieval societies, individuals with disabilities often faced social exclusion and stigma. However, there were also instances of social inclusion, such as the employment of individuals with disabilities in certain roles within royal courts or religious institutions.

[2] डॉ. अनिता गोदारा- हिंदी उपन्यासों में चित्रित विकलांग पात्रों का मनोवैज्ञानिक, आर्थिक एवं सामाजिक विश्लेषण- पृ.सं.-163

हैं। जब परिवारवालों का ही यही हाल है, तो समाज के बारे में सोचना ही परे है। ऐसे भी नहीं है कि हमेशा परिवार से उनको तिरस्कार ही मिला है, ऐसे भी माँ-बाप है जो उनका साथ देते हुए उनकी जिंदगी को पूरी तरह सफल बना देते हैं। समाज में पहली बात लोगों के नजरिया का है जो उनके शारीरिक अवस्था को अधिक महत्व देते हुए उन्हें किसी भी काम के लायक नहीं समझते हैं। उनके साथ समाज का जो दया या घृणा भरा दृष्टिकोण है वह उनको मानसिक रूप से और भी दिक्कत पहुंचाता है।

शिक्षा के क्षेत्र में भी यही हाल है कि समावेशी शिक्षा की बात करने पर भी यह व्यवस्था अभी सारे बच्चों की पहुँच तक नहीं पहुँच पाई है। अभी भी दिव्यांग बच्चों को 'विशेष' कहकर अलग श्रेणी में रख देते हैं। इन सभी कारणों से ही उनकी आर्थिक स्थिति भी कभी स्थिर नहीं बन पाती है। क्योंकि समाज का एक हिस्सा अभी भी यही मानकर चलते हैं कि यदि लोग दिव्यांग है तो वे काम करने में सक्षम नहीं है या वे लोग उन्हें काम देने में तैयार नहीं होते हैं। आवश्यक योग्यताओं के बाद भी इसे एक वजह बताकर उन्हें अपने हक़ की नौकरी से दूर रखते हैं। इस प्रकार उनका दैनिक जीवन ही बहुत अधिक समस्याओं से गुज़रता है।

समाज का नजरिया दिव्यांग लोगों के प्रति सदा दया या घृणा भाव ही रहा है। समानता के नज़र से उनको देखने या व्यवहार करने के स्तर तक या यह समझने में कि दुनिया में सभी मनुष्यों का समान रूप से अधिकार है, हमारा समाज आज भी पीछे है। साहित्य की यही खासियत है कि वह समाज की गतिविधियों को साथ लेकर चलता है। समय-समय पर बहुत अधिक विमर्श हिंदी साहित्य के जगत में आए जो समाज द्वारा हाशिये पर रखे गए लोगों की आवाज़ बनी। दिव्यांग विमर्श भी इक्कीसवीं सदी के प्रारम्भ में साहित्य के क्षेत्र में आया और सदियों से भेदभाव की शिकार होते दिव्यांग लोगों के आवाज़ बना। दिव्यांग विमर्श के सम्बन्ध में डॉ. विनय कुमार पाठक लिखते हैं कि- "स्त्री, दलित और जनजातीय-विमर्श के बाद इक्कीसवीं सदी के प्रथम दशक की दस्तक के रूप में विकलांग-विमर्श स्थापित हो रहा है जो शुभ-लक्षण का संकेत है। जाति और लिंग से रहित शुद्ध मानवतावादी दृष्टि पर आधारित यह ऐसा अभिनव विमर्श है जो किसी मानव को जन्म से या जीवन पर्यन्त किसी दुर्घटना या विकार से कभी भी हो सकता है।"[3] दिव्यांग विमर्श दिव्यांग जीवन की वास्तविकता को पाठकों के सामने रखने तथा उनके जीवन में बदलाव लाने की आशा रखता है। दिव्यांग जीवन की वास्तविकता का चित्रण भी हाल में प्रकाशित हिंदी रचनाओं में देखा जा सकता है। दिव्यांग विमर्श की नींव तो इक्कीसवीं सदी के शुरू में ही डाली गई थी लेकिन उससे जुड़ी रचनाएँ अधिक मात्रा में अब प्रकाशित हो रही हैं। सम्यक ललित द्वारा संपादित 'मैं तुम्हारी तरह' एक ऐसा कहानी संग्रह है जिसमें दिव्यांग जीवन से जुड़े विभिन्न पहलुओं की कहानियां मिलते हैं। उनके जीवन की विभिन्न पक्षों जैसे पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक, मनोवैज्ञानिक, मानवाधिकार सम्बन्धी आदि का चित्रण इन कहानियों द्वारा कहानीकार ने किया है। दिव्यांग जीवन की वास्तविकताओं को इन कहानियों द्वारा व्यक्त किया गया है।

'मैं तुम्हारी तरह' कहानी संग्रह दिव्यांग जीवन के विभिन्न पक्षों को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करता है। परिवार में जब दिव्यांग व्यक्ति पैदा होता है तो उसे कंधे का बोझ समझने की प्रवृत्ति देखी जा सकती है। परिवारवालों के मुँह से कम से कम एक बार तो उन्हें इस तरह की बातों का सामना करना ही पड़ता है। परिवार में प्रमुख रूप से यही समस्या या चिंता रहती है कि दिव्यांग लोगों से कोई लाभ नहीं होने वाला है और जैसे ही इस बात में बदलाव आता है उनका रवैया भी बदल जाता है। पल्लवी विनोद की 'विनिमय', रौशनी रावत की 'विकल्पहीन', पल्लवी मिश्रा की 'स्वीकृति', वर्षा सक्सेना की 'दोहराना ज़रूरी नहीं', डॉ. चमन टी. माहेश्वरी की 'गलत ही सही है', पारुल बंसल 'और दीप जल उठा', लकी राजीव की 'हरसिंगार' आदि कहानियां पारिवारिक सन्दर्भ में दिव्यांग व्यक्तियों के जीवन के विभिन्न पक्षों को प्रस्तुत करती हैं। इनमें परिवार का सकारात्मक और नकारात्मक दोनों पक्षों का चित्रण देखा जा सकता है।

[3] डॉ. विनय कुमार पाठक- विकलांग विमर्श दशा और दिशा- भूनिका-पृ.सं.-9

अधिकांश कहानियों में माँ-बाप तो साथ देते हैं और अन्य सदस्य तो दिव्यांग व्यक्तियों को बोझ समझ लेते हैं। 'विनिमय' कहानी में परिवार से तिरस्कृत दो दिव्यांग पात्रों को देख सकते है दोनों का सिर्फ माँ साथ देती है बाकी लोगों को लगता है वे घर के लिए बोझ हैं। पुरुष पात्र का जीवन सन्दर्भ नौकरी पाने पर बदल तो जाता है लेकिन नारी पात्र का जीवन अंत तक वैसे की वैसे ही रह जाता है।

'विकल्पहीन' में दिव्यांग व्यक्तियों के साथ होने वाले घरेलु शोषण को दिखाया गया है। इसमें ससुराल के शोषण को नायिका को इसलिए सहना पड़ता है क्योंकि अपने परिवारवालों उसे अपनाने से इनकार कर दिया था। कहानी के अंत में वह एक अखबार की खबर बनकर रह जाती है जिसका किसी पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। कहानी में उनके जीवन को भी अहमियत न देनेवाली मानसिकता को दिखाया गया है। 'स्वीकृति' में एक ऐसे पिता को देखा जा सकता है जो दिव्यांग बच्चे होने की संभावना जानते हुए भी उसको दुनिया में लाने का सारा प्रयास करता है जबकि अस्पताल में गर्भपात का सुझाव दिया था। वह उस बच्चे का पूरा साथ देते हुए उसे जीवन में सफलता तक पहुंचाता है। 'दोहराना ज़रूरी नहीं' 'और दीप जल उठा' और 'हरसिंगार' में दिखाया गया है कि किस प्रकार परिवार और समाज दिव्यांग व्यक्ति को शादी के भी लायक नहीं समझते हैं और दिव्यांगता को लेकर किस प्रकार की अंधविश्वास लोगों के मन में हैं। 'गलत ही सही है' में दिव्यांग व्यक्ति के साथ उनके देखभाल करने वाले पत्नी-पति की मानसिकता को दिखाया गया है। कहानीकार दोनों पक्षों को दिखाने की कोशिश की है जिनमें दोनों की अपनी-अपनी दृष्टि सही है। सभी मनुष्य अपने परिवार का साथ चाहते हैं यह उनका अधिकार भी है। जब व्यक्ति दिव्यांग बन जाते हैं, वही अधिकार उनसे छीन लिया जाता है और परिवार से शुरू होकर समाज तक यह तिरस्कार व्याप्त हो जाता है। इन कहानियों में ऐसे विभिन्न परिवारों का सन्दर्भ देखा जा सकता है जिनमें एक तरफ परिवार दिव्यांग व्यक्तियों का पूरा साथ देते हुए उन्हें जीवन सफलता तक पहुंचाने में मदद करते हैं तो दूसरी ओर उन्हें एक बोझ की तरह देखते हुए तिरस्कार दृष्टि से देखने वाला परिवार। विभिन्न पारिवारिक जीवन सन्दर्भों से पाठकों को अवगत कराने में ये कहानियां सफल हुई हैं। इसमें साथ-साथ सामाजिक सन्दर्भ में उनके साथ कैसा व्यवहार होता है इसका पूरा चित्रण भी मिलता है। डॉ. गीता शर्मा की 'गूंगी नियति' में यह दिखाती हैं कि लोग किस प्रकार दिव्यांग व्यक्तियों का फ़ायदा उठाकर उनका शारीरिक शोषण करते हैं। वे अपने लिए प्रतिक्रिया जताने में अक्षम हो जाते हैं तो लोग इसे एक अवसर की तरह देखते हैं। इस सामाजिक सच्चाई की ओर कहानीकार हमारा ध्यान आकृष्ट करती है। समाज का नजरिया ही कुछ इस प्रकार है कि वह दिव्यांग व्यक्तियों को किसी काम के लिए लायक नहीं समझती है। उनके अनुसार वे लोग दया के पात्र हैं और किसी के आश्रय में ही रह सकते हैं। इस सामाजिक रूढ़ी को चुनौती देने का काम विभिन्न कहानीकारों ने किया है। सार्वजनिक स्थान कभी भी सभी मनुष्यों के लिए नहीं बनाए गए हैं। अपने आपको 'सामान्य' समझने वालों का ध्यान उस दिशा में कभी नहीं गया है। इस प्रकार दूर से दिव्यांग जीवन देखकर उनपर बात करने वालों को उनके जीवन की वास्तविकता से अवगत कराने का प्रयास इन कहानियों के माध्यम से हुआ है।

दिव्यांग व्यक्तियों के जीवन में बाहरी तौर पर बहुत अधिक समस्याएं तो होती ही हैं। लेकिन जब बाहर से इस तरह का व्यवहार मिलता है तो उनके मन को वह इतना प्रभावित करता है कि उनके विकास में ही असर डालता है। दिव्यांग व्यक्तियों के मन में अपनी दिव्यांगता के कारण पहले से ही हीन भाव विद्यमान रहते हैं और जब अपने लिए तिरस्कार भरे व्यवहार का सामना करना पड़ता है तो वह उन्हें और भी प्रभावित कर देता है। यह मनुष्य पर सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रकार का असर डाल सकता है। कुछ में यह आगे जीने का जीवन को सफल बनाने की ऊर्जा प्रदान करती है तो दूसरी ओर यह सभी चीज़ों के प्रति उनके मन में घृणा पैदा करने और अपने को बेकार समझने की सोच पैदा कर देती है। इसका एक अच्छा उदाहरण है ममता व्यास की 'सिलबट्टा' कहानी। इसमें दिव्यांग पात्र अपने बचपन से ही यही सुनकर बड़ा हो जाता है कि वे किसी काम के लायक नहीं उससे बेहतर घर का सिलबट्टा है। बड़े होने पर उसके मन में भी यही विचार पनप गया है कि वह काम नहीं कर सकता है और उसका स्वभाव पूरी

तरह नकारात्मक बन जाता है। कहानी के अंत में जिस सिलबट्टे से उसकी तुलना होती थी उससे ही अपनी माँ को मार देता है। अपनी बचपन से उस समय तक की उसकी मन की लहरें बाहर आ जाती हैं कि- "मेरी ज़िन्दगी में अकेलापन तूने भरा माँ तूने... इस नशे की तरफ़ किसने धकेला? तूने! ज़िन्दगी को नरक किसने बनाया? तूने!" एक कमरे में बंद कर दी थी तूने मेरी ज़िन्दगी... लूला-लूला शब्द सुनते-सुनते मैं जवान हुआ हूँ। एक हाथ एक पैर कमज़ोर है तो क्या तू मुझे प्यार नहीं करेगी? शरीर का कोई अंग कमज़ोर है तो क्या दुनिया मुझसे प्यार नहीं करेगी? रजनी मुझे प्यार नहीं करेगी? मुझसे ब्याह नहीं करेगी? क्यों माँ? मेरी इच्छाओं का कोई मोल नहीं? आज मैं इस जिल्लत से, इस नफ़रत, इस पीड़ा इस दुःख के कारण को ही खत्म कर देता हूँ। मुझसे अच्छा तुझे ये सिलबट्टा लगता हैं न? मेरी जगह अगले जनम में सिलबट्टा पैदा करना..."[4] यहाँ हम देख सकते हैं कि परिवार और समाज किस तरह बचपन से ही उसके साथ व्यवहार करते आये थे, इसका अंदाजा लगाया जा सकता है। इस प्रकार हम जान सकते हैं कि दिव्यांग व्यक्तियों के साथ मजाक समझकर कहने वाली बातें उनके मन को कितनी चोट पहुंचाते हैं। समाज में आज भी ऐसे बहुत अधिक लोग हैं जो दिव्यांग लोगों को व्यक्ति न समझकर उनकी दिव्यांगता को महत्व देते हुए उसी हिसाब से पुकार जाते हैं चाहे उसका नाम कुछ भी हो। व्यक्ति को व्यक्ति के रूप में देखने में आज भी हमारा समाज सक्षम नहीं बन पाया है। यह कहानी संग्रह इस प्रकार हमारे समाज की वास्तविकता पर प्रकाश डालता है।

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में यही कहा जा सकता है कि आज भी समाज में दिव्यांग व्यक्तियाँ भेदभाव का शिकार हो रही हैं। नियमों द्वारा उनके अधिकारों का संरक्षण का प्रावधान करने के बाद भी उनका संरक्षण पूरी तरह नहीं हो पा रहा है। आज भी बहुत-सी ऐसी इमारतें हमारे चारों ओर हैं जिनमें सभी लोगों की पहुँच मुमकिन नहीं है। पहले समाज में यही सोच पैदा करने की आवश्यकता है कि दिव्यांग व्यक्तियाँ समाज का ही हिस्सा हैं और समावेशी समाज की संकल्पना उनके लिए की जाने वाली दया नहीं है, बल्कि उनका अपना हक़ है। परिवार, समाज, शिक्षा, रोज़गार सभी क्षेत्रों में उन्हें समस्याएं झेलनी पड़ती हैं। वास्तव में उनके साथ जो होता है उनके मानवाधिकारों का हनन ही है। उनकी पहचान से लेकर उनके जीने के हक़ तक लोग दखलअंदाज़ी कर देते हैं। प्रस्तुत कहानियों ने इस प्रकार समाज की ज्वलंद समस्या को, मानवाधिकार हनन को हमारे सामने प्रस्तुत किया है। इसमें दिव्यांग व्यक्तियों के जीवन से जुड़े पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक, मनोवैज्ञानिक मुद्दों को उठाया गया है। उनके दैनिक जीवन में किस प्रकार एक-एक जगह उन्हें इस तरह के भेदभाव का सामना करना पड़ता है इसका अंदाज़ा कहानी पढ़ने पर लोगों को हो जाता है। दिव्यांगों के प्रति लोगों की मानसिकता में बदलाव की आवश्यकता है और यह भी समझने की आवश्यकता है कि दुनिया में सभी मनुष्यों का समान अधिकार है। इस तरह की कहानियां उनके जीवन में बदलाव की राह खोलती हैं और खुद दिव्यांग व्यक्तियों को अपने मन की हीन भावना को दूर करते हुए जीवन को सफल बनाने का ऊर्जा प्रदान करती है।

सन्दर्भ सूची

1. (सं.) ललित, सम्यक, 'मैं तुम्हारी तरह' नई दिल्ली, श्वेतवर्णा प्रकाशन, 2023।
1. (डॉ.) कुमार, विनय पाठक, 'विकलांग-विमर्श दशा और दिशा' दिल्ली, भावना प्रकाशन, 2021।
2. (डॉ.) गोदारा, अनिता, 'हिंदी उपन्यासों में चित्रित विकलांग पात्रों का मनोवैज्ञानिक, आर्थिक एवं सामाजिक विश्लेषण' कानपुर, माया प्रकाशन, 2023।

[4] सम्यक ललित- मैं तुम्हारी तरह- पृ.सं.-110